International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182, Print ISSN: 2349-5979, Impact Factor: RJIF 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 4; Issue 3; March 2017; Page No. 265-266

अभाव की तात्विकता और अनुपलब्धि प्रमाण

डॉ0 अनन्त कुमार यादव

अध्यक्ष, दर्शन विभाग, इन्स्टीट्यूट ऑफ ऑरियण्टल फिलोसोफी, वृन्दावन, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

समस्त आस्तिक और नास्तिक दर्शनो मे अभाव पर गहन चर्चा वैशेषिक दर्शन मे देखने को मिलती है। वस्तुतः वैशेषिक सूत्र और भाष्य मे छः भावात्मक पदार्थो का वर्णन मिलता है।स्वंय कणाद नें अभाव का वर्णन भी किया है, किन्तु उसे पदार्थ नही माना।[1] बाद के वैशेषिको ने अभाव को पदार्थ के रूप में मान्यता दी। अभाव दो प्रकार का होता है –संसर्गाभाव (जिसमे दो वस्तुओ के सम्बन्ध का निषेध किया जाता है, जैसे– क ख मे नही है) और अन्योन्याभाव (दो वस्तुओ का परस्पर भेद, जैसे– क ख नही है)। ज्ञातव्य है कि संसर्गाभाव तीन प्रकार का होता है– प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव ओर अत्यन्ताभाव। अन्योन्याभाव एक ही प्रकार का होता है। इस प्रकार कुल मिलाकर अभाव चार प्रकार का हुआ। उल्लेखनीय है कि प्रागभाव का अर्थ है – उत्पत्ति के पूर्व कारण में कार्य का अभाव। जैसे उत्पत्ति के पूर्व घट का मिट्टी में अभाव। यह अनादि और सान्त है। जबकि प्रध्वंसाभाव का अर्थ है विनाश के बाद उस वस्तु का अभाव, जैसे – ध्वंस हो जाने के बाद घट का अभाव। यह सादि और अनन्त है। अत्यन्ताभाव त्रिकाल में अभाव है जैसे – शशश्रृंग, आकाशकुसुम आदि का अभाव। यह अनादि और अनन्त है। वहीं अन्योन्याभाव का अर्थ है दो वस्तुओं का परस्पर भेद, जैसे घट पट नहीं है अर्थात् घट में पटाभाव और पट मे घटाभाव है। वस्तुतः यह दो वस्तुओं के तादात्म्य का अभाव है। यह भी आदि और अनन्त है। ध्यातव्य है कि यदि प्रागभाव न हो तो सभी वस्तुयें अनादि हो जायेगी और यदि प्रध्वंसाभाव न हो तो सभी वस्तुयें नित्य हो जायेगी। किन्तु यदि अत्यंताभाव न हो तो सभी वस्तुयें सदा और सर्वत्र विद्यमान रहेगी। इसी प्रकार यदि अन्योन्याभाव न हो तो सभी वस्तुयें अभिन्न हो जायेंगी।

उल्लेखनीय है कि वैशेषिक सूत्रकार कणाद ने अभाव को एक पृथक पदार्थ के रूप में स्वीकार नहीं करते किन्तु इसके चार प्रकारों को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है और यह भी बताया है कि अभाव के ये चारों भेद प्रत्यक्षगम्य है।[2] किन्तु इसके विपरीत प्रशस्तपाद ने यह मत प्रकट किया कि अभाव अनुमान का विषय है।[3] इसकी प्रकार प्रशस्तपाद ने अभाव को पृथक पदार्थ भी नहीं माना। किन्तु उत्तरवर्ती वैशेषिकों ने एक तरफ जहां अभाव को पृथक पदार्थ माना वहीं यह भी निरूपित किया कि अभाव प्रत्यक्षगम्य है। इस प्रकार आमतौर पर न्यायवैशेषिक अभाव को प्रत्यक्षगम्य मानते है और न्यायवार्तिक के अनुसार यह अभाव का प्रत्यक्ष विशेषण विशेष्यभाव सन्निकर्षमूलक प्रत्यक्ष से होता है। उद्योतकर स्पष्ट रूप से कहते है कि जिस इन्द्रिय से किसी वस्तु का प्रत्यक्ष होता है उसी से उस वस्तु की जाति तथा अभाव का भी प्रत्यक्ष होता है।[4]

ज्ञातव्य है कि भाट्टमीमांसको ने अभाव के पदार्थत्व को स्वीकार करते हुये भी अभाव की प्रत्यक्षग्राह्यता के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं किया है। इनका कथन है कि अभाव और इन्द्रिय के बीच कोई सम्बन्ध नहीं रह सकता है। इस प्रकार इनका कहना है कि निषेधस्वरूप पदार्थ का ग्रहण निषेधात्मक प्रमाण से ही होना चाहिए, जिसकों मीमांसको ने अनुपलब्धि नामक प्रमाण के रूप में स्वीकार किया है। इनका कहना है कि अभाव है और इसका ज्ञान किसी अन्य प्रमाण से नहीं होता है, इसीलिए अभाव स्वयं ही एक प्रमाण है जिसे अनुपलब्धि कहा जाता है।[5] ज्ञातव्य है कि कुमारिल भट्ट मीमांसक और वेदान्ती अनुपलब्धि प्रमाण को एक स्वतंत्र प्रमाण स्वीकार करते है।

अब एक सार्थक प्रश्न उठता है कि अभाव का तात्विक महत्व क्या है ? इस सम्बन्ध में दर्शन के इतिहास पर दृष्टिपात करना ठीक रहेगा। वस्तुतत्व या सत्य के अन्वेषण में निषेध (नेति – नेति) की प्रक्रिया का भी अपना विशिष्ट महत्व है। ऐसे दार्शनिकों की संख्या काफी बड़ी है जिन्होनें निषेध या शून्य को दार्शनिक चिन्तन का प्रेरक माना है। हेगल के अनुसार निषेधात्मकता ही जगत का सार है।[6] भाव पदार्थो का ग्रहण प्रमाणों के द्वारा स्वतंत्र रूप से हो जाता है किन्तु अभाव का ग्रहण प्रतियोगी के प्रतिषेध के रूप में ही होता है। वस्तुतः भाव पदार्थ स्वतः गृहित होते है जबकि अभाव का ग्रहण प्रतियोगी भाव के निषेध पर आधारित होता है। उल्लेखनीय है कि सभी भारतीय दर्शनों में अभाव पर चिन्तन किया गया है फिर भी वैशेषिक दर्शन में भाव की तरह अभाव की भी वस्तु सत्ता मानी गई है। किन्तु भाव अभाव में इस अन्तर को वैशेषिको ने भी माना है कि अभाव का ज्ञान भाव परतंत्र होता है। प्रतिषेध रूप अभाव का तो यह प्रमुख लक्षण है कि वह उसी के अधीन है जिसका वह प्रतिषेध करता है। प्रतिषेध के बिना अभाव का ज्ञान नहीं हो सकता। न्यायवार्तिककार ने इसी तथ्य को इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि भाव स्वतंत्र होता है और अभाव परतंत्र । भाव की सत्ता उसकी अपनी उपलब्धि की नियामक है जबकि अभाव की सत्ता में उसकी प्रतियोगी की उपलब्धि नियामक है इस प्रकार भाव के समान अभाव का भी अपना तात्विक महत्व है।[7]

अनुपलब्धि प्रमाण

भाट्ट और वेदान्त मतानुसार अनुपलब्धि ज्ञान का एक स्वतंत्र साधन है। इनके अनुसार किसी भी प्रमाण की अनुपस्थिति स्वयं ही अभाव का एक प्रमाण या अनुपलब्धि है। कुमारिल भट्ट का कहना है कि अगर कोई वस्तु अस्तित्ववान है तो उसके अस्तित्व का प्रमाण प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द और अर्थापत्ति इन पांच में से किसी न किसी प्रमाण से मिल जाता है। अगर इन पांच प्रमाणों में से किसी वस्तु का भाव न सिद्ध हो तो स्वयं इसका अभाव सिद्ध हो जाता है। यही अनुपलब्धि है। पार्थसारथी मिश्र अनुपलब्धि के सम्बन्ध में कहते है कि किसी भी वस्तु के दो पक्ष है भाव और अभाव। अगर किसी वस्तु का किसी विशेष देशकाल पर भाव है तो यह पांच प्रमाणों द्वारा किसी न किसी प्रकार सिद्ध होता है किन्तु योग्य उपाधियों की उपस्थिति में भी वस्तु का ज्ञान न हो रहा हो तो उसका अभाव स्वतः सिद्ध होता है। यही अनुपलब्धि प्रमाण है।

ध्यातव्य है कि सभी प्रकार की अनुपलब्धि को ज्ञान का प्रमाण नहीं माना जा सकता है। अगर कक्ष में पर्याप्त प्रकाश न होने के कारण ज्ञाता को भूमि पर रखे घट का प्रत्यक्ष न हो रहा हो तो इसे अनुपलब्धि नहीं कहेगें। वस्तुतः प्रत्यक्षीकरण या प्रमाणों की उपाधियां

उपस्थित हो तथा वस्तु के भाव के पक्ष में कोई प्रमाण न मिले तभी वस्तु का अभाव माना जाना चाहिए और तभी उस प्रमाण को अनुपलब्धि की संज्ञा दी जानी चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस परिस्थिति में जिस वस्तु की उपलब्धि होनी चाहिए उन परिस्थितियों में अगर उस वस्तु की उपलब्धि न हो तभी इसे अनुपलब्धि प्रमाण की संज्ञा दे सकते है इसलिए योग्यानुपलब्धि ही प्रमाण है।[8] वेदान्त परिभाषा में अनुपलब्धि के सम्बन्ध में तीन महत्वपूर्ण बातें बतलाई गई है

(1) अनुपलब्धि का विषय वस्तु अभाव है

(2) अनुपलब्धि साक्षात् ज्ञान है, इसमें स्मृति का अंश नही होता

(3) अनुपलब्धि ज्ञान का स्वतंत्र साधन है

अब प्रश्न उठता है कि ज्ञान के स्वतंत्र साधन या प्रमाण के रूप में अनुपलब्धि कहां तक उचित है ? वस्तुतः अनुपलब्धि विषयक तीन प्रकार के मत भारतीय ज्ञानमीमांसा में पाया जाता है। प्रथम श्रेणी में वे ज्ञानमीमांसक है जिसके अनुसार अनुपलब्धि स्वतंत्र प्रमाण है। इस कोटि में भट्टमीमांसक और वेदान्ती आते है। द्वितीय श्रेणी में वे दार्शनिक है जो अभाव के ज्ञान के साधन के रूप में प्रत्यक्ष प्रमाण को ही स्वीकृत करते है। ये अनुपलब्धि को ज्ञान का स्वतंत्र साधन स्वीकृत नहीं करते है। इस मत के समर्थकों में नैय्यायिक और प्रभाकर मीमांसको का उल्लेख किया जा सकता है। तृतीय श्रेणी में वह ज्ञान मीमांसक है जो अभाव का ज्ञान अनुमानजन्य मानते है तथा अनुपलब्धि को स्वतंत्र प्रमाण मानने से इन्कार करते है। बौद्ध तथा वैशेषिक इस कोटि के ज्ञानमीमांसको में से है। अपने अपने मतों के समर्थन में इन समस्त दार्शनिकों के अपने – अपने तर्क है परिणामस्वरूप यह प्रश्न उठता है कि अभाव विषय के प्रमाण रूप में क्या अनुपलब्धि प्रमाण है अथवा अभाव विषय का ज्ञान प्रत्यक्ष या अनुमान से होता है?

इस सन्दर्भ में न्यायायिक अनुपलब्धि को अनावश्यक बताते है। इनका कहना है कि अभाव का ज्ञान प्रत्यक्ष से होता है। इसके उत्तर मे भाट्ट मीमांसकों का कहना है कि अभाव कोई वस्तु नहीं जिसका इन्द्रीय के साथ सम्पर्क संभव हो अतः इसका प्रत्यक्ष नहीं हो सकता। वस्तुतः भाट्ट मीमांसक अभाव को अधिष्ठानातिरिक्त तत्व कहते है। इस मत के अनुसार अधिष्ठान का ज्ञान तो हमें प्रत्यक्ष से होता है किन्तु अतिरिक्त तत्व का ज्ञान अनुपलब्धि से ही होता है। अतः अनुपलब्धि को प्रत्यक्ष कहना उचित नहीं है। इसी प्रकार वैशेषिक प्रशस्तपाद सांतवे पदार्थ के रूप में अभाव की चर्चा की है परन्तु ये अभाव के ज्ञान को अनुमान से प्राप्त ज्ञान मानते है। बौद्ध दार्शनिक धर्मकीर्ति ने भी अभाव के ज्ञान का साधन अनुमान को ही बतलाया है। किन्तु वेदान्ती इस अनुमान को आत्माश्रय दोष से ग्रस्त बताते हैं। अनुपलब्धि पर टिप्पणी करते हुए प्रोफेसर चन्द्रधर शर्मा लिखते है कि अभाव का अनुमान नहीं हो सकता क्योंकि यहां व्याप्ति ज्ञान नहीं होता। इसी प्रकार अभाव का ज्ञान उपमान, शब्द या अर्थापत्ति से भी नहीं हो सकता है। अतः अभाव के ज्ञान के लिए अनुपलब्धि नामक स्वतंत्र प्रमाण मानना आवश्यक है।[9] इस प्रकार अनुपलब्धि ज्ञान का एक वैध स्वतंत्र साधन व प्रमाण है और इस समस्त दार्शनिक विमर्श से अन्ततः दर्शन की ही श्रीवृद्धि होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भारतीय दर्शन – चन्द्रधर शर्मा पृष्ठ 168।
2. वैशेषिक सूत्र 9/1/6– 9।
3. प्रशस्तपाद भाष्य, पृष्ठ – 180।
4. येनेन्द्रियेण या व्यक्तिःगृह्यते, तेनेवैन्द्रियेण तज्जातिः तद्भावोऽपि गृह्यते, न्यायवार्तिक – 1/1/4।
5. प्रमाण पंचकं यत्र वस्तुरूपे न जायते। वस्तुसत्तावबोधार्थ तत्राभाव प्रमाणता। श्लोकवार्तिक (अभाव)।
6. Negation – J.B.Bhattacharya P – I.
7. भारतीय न्यायशास्त्र – डॉ0 चक्रधर विजलवान, पृष्ठ 586।
8. भारतीय ज्ञानमीमांसा – डॉ0 नीलिमा सिन्हा, पृष्ठ 299 भारतीय दर्शन – चन्द्रधर शर्मा पृष्ठ – 200।